पेरिस
२२ दिसम्बर, २००५

संदेश संख्या – ८३

संत थॉमस के सूत्र
(यीशु के उद्‌गार)

सत्य का खोजी विद्रोही होता है, वह जीवन और उसके बोध में होता है, अतः वह मन और उसकी अवधारणाओं से निःसृत प्रश्नों को महत्वपूर्ण नहीं समझता । विद्रोह पूर्ण परिवर्तन है जबकि क्रांति केवल पुनर्मूल्यांकन । क्रांति परस्पर विपरीतों की संगठित वृद्धि रूपी दासता का अंधकार है जबकि विद्रोह ऐसे सभी विपरीतों से मुक्ति का आनन्द। क्रांति पूर्वव्यवस्था की संशोधित सततता मात्र है, जबकि विद्रोह परम पवित्र है, पूर्णतया नया जीवन है, नया अवतरण है, नया जन्म है ।

यीशु और थॉमस दोनों विद्रोही हैं । ये प्रज्ञा प्रस्फुटित पुष्प हैं, जबकि दूसरे ''ऐसा होना चाहिए'' के भारी बोझ से दबे अनुयायी मात्र ।

कुल २१ सूत्र हैं । इनमें से ग्यारह इस संदेश में लिये गये हैं जबकि शेष दस अगले संदेश – ८४ में ।

सूत्र–१ : शिष्यगण यीशु से बोले – ''हमें बतायें कि स्वर्ग का राज्य कैसा है।'' यीशु ने कहा : ''यह, सभी बीजों में छोटा, सरसों के बीज की तरह है, परन्तु जब जोते हुये खेतों में गिरता है तो फिर बड़ा पौधा बन जाता है और स्वर्ग के सभी पक्षियों का आश्रय स्थल बन जाता है ।''

स्वर्ग या राज्य जैसी कोई चीज नहीं है । यह स्थूल तथा लोभी मन की बनाई हुई अवधारणा मात्र है । यह तो जीवन (निर्मन) के सूक्ष्मबोध की चीज है। इसीलिए सरसों के अत्यंत छोटे बीज के दृष्टांत द्वारा कहा गया है कि यह राज्य 'कुछ नहीं' जैसा है। यीशु का उद्देश्य ऐसे बीजों को सर्वत्र फेंकना था, परन्तु ऐसा बीजारोपण उपयुक्त मनुष्यों में होना चाहिए । तभी वह स्वर्ग के आनन्द एवं आशीर्वाद से पूर्ण असीम शून्यता को उपलब्ध होता है । वस्तुतः ये विभेदकारी चित्तवृत्ति यानी कि मन के विश्वासों एवं बन्धनों से मुक्ति के बीज हैं । यह मुक्ति ही शून्यता है और परमानन्द या सुखबोध का स्वर्ग है ।

सूत्र–२ : यीशु ने कहा – ''लोग शायद सोचते हैं कि मैं दुनिया में शांति फैलाने आया हूँ किन्तु वे नहीं जानते कि मैं दुनिया में आग, तलवार और युद्ध फैलाने आया हूँ ।''

''क्योंकि एक घर में पाँच होंगे : तीन, दो के विरुद्ध होंगे और दो, तीन के विरूद्ध । पिता पुत्र के विरूद्ध और पुत्र पिता के विरूद्ध होगा जबकि वे अकेले खड़ा होंगे ।''

''मैं तुम्हें वह दूँगा जिसे अभीतक आँखों ने नहीं देखा, कानों ने नहीं सुना, हाथ ने स्पर्श नहीं किया और जिसके भाव मनुष्य के हृदय में अब तक नहीं उठे।''

मिथ्याभिमान और स्वार्थ के प्रबल होने के कारण व्यक्ति अत्यंत द्वन्द्वग्रस्त होता है और इसीलिए वह शान्ति चाहता है । किन्तु शांति चैतन्य (यीशु) में है और व्यक्ति इस चैतन्य को स्वाध्याय अर्थात् तलवार, तप अर्थात् आग और ईश्वर–प्रणिधान अर्थात् दुष्प्रवृत्तियों से युद्ध के परिणामस्वरूप ही उपलब्ध हो सकता है।

विभेदकारी शरीरी चेतना में यानी कि मन में (१) विपर्यय अर्थात् अंधविश्वास या गलत जानकारी, (२) विकल्प अर्थात् अनुबंधित प्रतिक्रिया या पसन्द/नापसन्द और (३) निद्रा यानी महत्वाकांक्षा या संशय, हमेशा ही (i) प्रमाण अर्थात् यथार्थता या साक्ष्य और (ii) स्मृति यानी कि मानसिक निबंधन से रहित तथ्यपरकता, के विरूद्ध होते हैं । इसके अतिरिक्त, परम्परा का बोझ (पिता) और नई जागृति की स्वतंत्रता (पुत्र) भी एक दूसरे के विरुद्ध होते हैं। ये सब मन की प्रक्रियायें हैं ।

जीवन (यीशु) ने हमें इन्द्रियों को प्रत्यक्षबोध हेतु दिया है न कि वासना–पूर्ति हेतु । परन्तु मन का इन्द्रियों के विषय के साथ मिलकर एक हो जाने यानी कि तादात्म्य हो जाने के कारण हमलोग वासना के ही अभ्यस्त हो गए हैं । मन की बुद्धि सीमित है । इसीलिए वह कभी भी चैतन्य को उपलब्ध नहीं हो पाता।

सूत्र–३ : यीशु ने कहा–''मैं संसार के सामने मांस के इस शरीर में आया परन्तु मैंने सभी को नशे में मस्त पाया, किसी को भी प्यासा नहीं पाया।''

''इन मनुष्य पुत्रों के लिए मेरी आत्मा दुःखी है, क्योंकि हृदय से वे संवेदनहीन हो गये हैं । वे नहीं देख पाते कि वे संसार में खाली हाथ आये हैं और खाली हाथ ही यहाँ से चले जायेंगे, क्योंकि वे अभी नशे में मस्त हैं । जब नशा समाप्त होगा तब वे पश्चात्ताप करेंगे ।''

यीशु ने कहा – ''भगवत्ता के कारण शरीर का अस्तित्व है – यह एक चमत्कार (आश्चर्य) है, परन्तु जब इस शरीर के कारण भगवत्ता अस्तित्व में आया हो तब तो यह परम चमत्कार है, परम आश्चर्य है। मुझे आश्चर्य होता है कि कैसे यह परमधन इस निर्धनता में निवास करता है।''

यीशु का शरीर, रक्त कोशिकायें एवं अस्थिमज्जा–परम चैतन्य का स्पर्श पाता है परन्तु यीशु सम्पूर्ण मानवजाति को मोहरूपी नशे में मस्त पाते हैं, उन्हें कोई भी 'सत्य का प्यासा' नहीं दिखाई देता । लोग सत्य से संबंधित विचारों एवं उसकी व्याख्याओं में ही प्रसन्न रहते हैं । वे मन की भ्रांति और उसकी व्यर्थता में ही अपना जीवन न कर देते हैं और बाद में पश्चात्ताप करते हैं ।

परम चैतन्य स्वयं को अभिव्यक्त करने के लिए मानव–शरीर का उपयोग करता है–यह आश्चर्य है, चमत्कार है, परन्तु एक मानव शरीर द्वारा स्वयं को इतना खाली कर दिया जाना कि परम चैतन्य उसका उपयोग कर सके–यह परम आश्चर्य, परम चमत्कार है । यह परम आश्चर्य ही है कि असीम भगवत्ता का अवतरण एक क्षुद्र एवं क्षणभंगुर शरीर में हो सकता है। इस करूणा का क्या कहना?

सूत्र–४ : यीशु ने कहा – ''प्रातःकाल से संध्या तक तथा संध्या से प्रातःकाल तक कुछ भी विचार न करो अन्यथा तुम उसे धारण कर लोगे ।''

शिष्यगण बोले–''आप स्वयं को हमलोगों के समक्ष कब प्रकट करेंगे तथा हमलोग आपको कब देख सकेंगे ?''

यीशु ने कहा – ''लज्जारहित होकर जब तुम अपने वस्त्रों को उतार सकोगे और उन्हें अपने पैरों से कुचल सकोगे जैसा कि छोटे बच्चे करते हैं, तब जीवन–पुत्र (यीशु) को तुम देख सकोगे और भयमुक्त हो सकोगे।''

चैतन्य तभी होता है जब पूर्ण रिक्तता होती है। इसके लिए ज्ञात से मुक्त हो जाओ। यद्यपि दैनिक कार्यों के सम्पादन हेतु ज्ञात (जानकारी) तब भी उपलब्ध रह सकता है। चैतन्य (जीवन–पुत्र, अस्तित्व का सूर्य) निर्दोष को ही उपलब्ध होता है। भय मन है। मन और उससे उत्पन्न भय का जब निर्दोषता में विलय हो जाता है, तभी जीवन की सहजावस्था होती है।

सूत्र–५ : यीशु ने कहा–''जब तुम उपवास करते हो तब अपने लिए पाप पैदा करते हो, जब तुम प्रार्थना करते हो तब तुम निंदित होते हो, और जब तुम भिक्षा देते हो तब अपनी आत्मा के लिए बुरा करते हो।''

''जब तुम किसी क्षेत्र में भ्रमण करते हो और लोग तुम्हारा स्वागत करते हैं और फिर तब वे जो भी तुम्हें भोजन के लिए देते हैं–उसे स्वीकार करो और उनके बीच जो बीमार हो उसे स्वास्थ्य प्रदान करो । क्योंकि तब जो तुम खाते हो, वह तुम्हें अपवित्र नहीं करता बल्कि जो तुम मुँह से बोलते हो, वही तुम्हें अपवित्र करता है ।''

उपवास, प्रार्थना, आत्मदीनता एवं आत्म–महिमामण्डन–ये सभी हमारी भ्रांति, पाखण्ड एवं अहंकार को बढ़ा सकते हैं। अपने चारों ओर के लोगों के साथ सामंजस्यपूर्ण सह–अस्तित्व में रहो और करुणावान बनो। तुम जो खाओगे उससे तुम्हारा जीवन पुष्ट होगा किन्तु तुम जो बोलोगे वह मानसिक प्रदूषण द्वारा जीवन को दूषित कर सकता है।

सूत्र–६ : यीशु ने कहा – ''स्वर्ग का राज्य उस गड़ेरिये के राज्य जैसा है जिसके एक सौ भेड़े थीं । उनमें से जो सबसे बड़ी थी वह अपने समूह से भटक गई थी। वह गड़ेरिया निन्यानबे भेड़ों को छोड़ उस भटकी एक भेड़ को तब तक खोजता रहा जब तक वह मिल न गयी, बुरी तरह थक जाने के बाद भी उसने उस भेड़ से कहा–मैं तुम्हें निन्यानबे भेड़ों से अधिक प्यार करता हूँ।''

अभिप्राय यह है कि निन्यानबे तक प्रसरित मन के राज्य के परित्याग से ही स्वर्ग का राज्य मिलता है। जो एकाकी है, वह वियुक्त या पृथक नहीं होता और न ही भटका हुआ होता है। इसके विपरीत वह सर्व–युक्त होता है । वह सुरक्षा के लोभ में या असुरक्षा के भयवश किसी विशि समूह का सदस्य नहीं होता। एकाकीपन निर्मनावस्था है, दिव्य–जीवन है और इसे भगवत्ता यानी कि यीशु सर्वाधिक प्यार करता है।

सूत्र–७ : यीशु ने कहा – ''पिता का राज्य एक ऐसे सौदागर की तरह है जिसके पास सौदा था और उसी दौरान उसे बाजार में मोती दिख गया।''

''सौदागर बुद्धिमान था, उसने अपना सारा सौदा बेचकर अपने लिए वह मोती खरीद लिया । क्या तुम भी किसी ऐसी निधि की खोज में हो, जो खो न सके, जो स्थायी हो, जिसे कोई कीट–पतंग खा न सके, न न कर सके ।''

चैतन्य उद्घोषणा करता है कि पिता के राज्य में अर्थात् मुक्ति की अवस्था में मनरूपी व्यापारी के लिए कोई स्थान नहीं होता, जो तुच्छ वस्तुओं की सौदेबाजी में लिप्त रहता है । वहाँ तो निर्मनावस्था का

प्रत्यक्षबोधरूपी 'मोती' ही वरेण्य है । यह सत्य की वह निधि है जो कभी धोखा नहीं देती, जो सार्वकालिक है, जो प्रज्ञा प्रदान करती है और जिसे शब्द और मानसिक अवधारणारूपी कीट–पतंग न नहीं कर सकते ।

सूत्र–८ : ''स्तनपान करते हुये कुछ शिशुओं को देखकर यीशु ने अपने शिष्यों से कहा–स्तनपान करते हुये ये शिशु ही स्वर्ग में प्रवेश के अधिकारी हैं।''

शिष्यों ने यीशु ने कहा – ''क्या तब शिशु होकर हमलोग भी स्वर्ग में प्रवेश कर सकेंगे ?''

यीशु ने कहा – ''जब तुम दो न रहकर एक हो जाते हो, जब तुम्हारा अन्दर और बाहर एक हो जाता है, ऊपर और नीचे एक हो जाता है, और जब तुम केवल पुरुष या केवल नारी नहीं होते, जब दोनों का लय हो जाता है तभी तुम स्वर्ग में प्रवेश के अधिकारी होगे ।''

मुक्ति यानी कि पिता का राज्य अर्थात् स्वर्ग शिशु–सा निर्दोष को ही उपलब्ध होता है न कि किसी मूढ़ को । मन के प्रत्येक स्तर पर पाये जाने वाले परस्पर विरोधों की समाप्ति पर ही अर्थात् अद्वैत की उपलब्धता द्वारा ही मुक्ति के राज्य में प्रवेश पाया जा सकता है ।

सूत्र–९ : यीशु ने कहा – '' तुम्हारे भाई की आँखों में धूलकण भी पड़ते हैं तो तुम उसे देख पाते हो, किन्तु तुम्हारी अपनी आँख में पड़ा हुआ शहतीर भी तुम्हें नहीं दिखता । जब तुम अपनी आँख में पड़े शहतीर को निकाल दोगे तभी तुम अपने भाई के आँख में पड़े धूलकणों को स्पता से निकाल सकोगे ।''

जब तक सामने दर्पण न हो, कोई भी व्यक्ति अपनी आँखें नहीं देख सकता। अतः दूसरों के लिए तुम्हारी आँखे दर्पण का काम कर सकें, उसके लिए तुम्हें अपनी दृष्टि स्वच्छ रखनी होगी, यानी कि अहंकार के प्रदूषण से मुक्त रखनी होगी ।

सूत्र–१० : यीशु ने कहा – ''किसी व्यक्ति के लिए एक साथ दो घोड़ों की सवारी करना और एक साथ दो धनुषों की प्रत्यंचा खींचना असम्भव है । उसी तरह एक सेवक दो मालिकों की सेवा नहीं कर सकता । क्योंकि तब एक मालिक खुश होगा तो दूसरा नाराज ।''

चैतन्य और महत्वाकांक्षा साथ–साथ नहीं चल सकते, विश्वास और आनन्द एक साथ नहीं रह सकते, सत्य और शास्त्र सहयात्री नहीं हो सकते । पाखण्डपूर्ण आचरण परमपवित्रबोध तक नहीं पहुँचा सकता ।

सूत्र–११ : यीशु ने कहा – ''ऊँचे पर्वत पर यदि नगर बसाया जाय और उसकी किलेबन्दी की जाय तो न उसका शीघ्रपतन होगा अैर न ही उसे छुपाया जा सकेगा ।''

''तुम्हारे घर की छत से हो रहे उपदेश को तुम स्वयं भी सुन रहे हो और दूसरे भी सुन रहे हैं । कोई भी जले दीप को झाड़ी में छुपाकर नहीं रखता और न ही उसे किसी गुप्त स्थान में रखता है बल्कि वह उसे दीप स्तम्भ पर रखता है ताकि वहाँ से गुजरने वाले उस प्रकाश का लाभ ले सकें।''

''एक अंधा व्यक्ति यदि दूसरे अंधे को मार्ग दिखाये तो दोनों गड्ढे में गिरते हैं ।''

चैतन्य शिखर पर है। वह चिल्ला–चिल्लाकर मन के बन्धनों से मुक्त होने के लिए आवाज देता है। इसे चर्च, मंदिर आदि में नहीं बाँधा जा सकता। यह किसी राजनैतिक या धर्मिक ठग का प्रचार भी नहीं है। राजनैतिक एवं धार्मिक ठगरूपी अन्धे लोगों की दूसरों से उधार ली गई बातों से सावधान रहे।

एक अंधा व्यक्ति दूसरे अंधे को मार्ग दिखाये तो उन्हें गड्ढे में गिरने से रोकना मुश्किल है।

जय यीशु, जय थॉमस ।